International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 13-09-2025, Accepted: 12-10-2025, Published: 28-10-2025
Volume 11, Issue 4, 2025, Page No. 45-47

सत्य की अवधारणा: भारतीय दर्शन और धार्मिक ग्रंथों में विवेचना

हर्षराम रामस्नेही
एम.ए. छात्र, योग केंद्र, विश्वविद्यालय क्रीडा मण्डल विभाग, विश्वविद्यालय सामाजिक विज्ञान और मानविकी कॉलेज, मोहनलाल सुखाडिया, विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश
सत्य की अवधारणा अनेक अर्थों में दी गयी है, किन्तु सत्य के एक ही अर्थ की ओर दृष्टि जाती है जो नित्य हैं, सकारात्मकता से युक्त है, स्वाभाविक है, जिसके होने न होने से हम प्रभावित होते हैं किन्तु हमारे होने न होने से वह प्रभावित नहीं होता है। उदाहरण के रूप में अगर सत्य को जानने का प्रयास करें तो वह उदाहरण स्वरूप होगा – ईश्वर, ब्रह्म, समय, आप्तवचन–वेद,
जब हम इन सभी को देखते हैं या इनका विचार मात्र आता है, तो हमारे मन में सकारात्मकता का उद्‌गम होता है यहीं इसका परिणाम स्वरूप है, कि यह सत्य के उदाहरण के रूप में सत्यापित हैं।
अनेक ग्रंथों में खोज के परिणामस्वरूप मैंने अनेक अर्थों में सत्य को देखा।
बृहदारण्यक उपनिषद में आप: (जल) से सत्य की उत्पत्ति बताई है, उसके पश्चात सृष्टि की उत्पत्ति बताई है। इस प्रकार ब्रह्म को ही एकमात्र सत्य भी कहा गया है। जब इन सभी विषयों को देखा तो सत्य को तीन अर्थों में जाना।
एक सत्य ब्रह्म के अर्थ में है। जहाँ कुछ उपनिषदों में ब्रह्म को ही सत्य माना है। शंकराचार्य कहते हैं "ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या" अर्थात ब्रह्म ही एकमात्र सत्य है, बाकी सब भ्रम है।
दूसरा सत्य एक अलग रूप में ईश्वर सत्ता या कोई अद्वितीय शक्ति को माना है। इसके अनुसार प्रत्येक ईश्वर का अनुयायी, उसके ईश्वर को एकमात्र सत्य मानता है। यहाँ भाव एक देव के रूप में है जैसे शिवमहापुराण में भगवान शिव को सत्य माना है, उत्पन्न कर्ता माना है। इसी प्रकार अन्य पुराणो में किसी एक विशेष शक्ति (भगवान) को सत्य माना है।
तीसरा सत्य है अष्टांग योग का यम के उपांग के रूप में सत्य या ग्रंथो में उल्लेखित सदाचार के आयामों में सत्य, जो सामाजिक रूप में तथा आत्म संतुष्टि के लिए महत्वपूर्ण है। यहाँ पर सत्य का अर्थ है झूठ न बोलना, जैसा देखा है वैसा ही बताना आदि, जो सत्य की एक सामान्य अवधारणा है, जिसे उपर से सभी जानते है, परन्तु सुक्ष्म स्तर पर नही जानते।
इस पत्र में सत्य से संबंधित सभी अव्यवों को जानने का प्रयास करते हुए भारतीय दर्शनो और धार्मिक ग्रंथों में सत्य के प्रारूप को समझने का प्रयास है।

मूल शब्दः सत्य, योग, यम, सदाचार, उपनिषद, पुराण, महाभारत, संस्कृति, धार्मिक ग्रन्थ

विभिन्न पारंपरिक ग्रंथो में सत्य की अवधारणा

जगत की उत्पत्ति से जगत के अंत तक अगर भारतीय संस्कृति किसीकी सत्ता समझती है, तो वह है– ब्रह्म या परमात्मा, जिसे ग्रंथों में सत्य के नाम से दर्शाया गया है। किसी भी संस्कृति का आधार उसके ग्रंथ को माना जाता है तथा उसके दृष्टिकोण को माना जाता है, दर्शन को माना जाता है। जहाँ विषय संस्कृति का है तो पुरातन से चली आ रही सबसे उन्नत संस्कृति भारतीय संस्कृति है, जो अपने वेदों के कारणस्वरूप समाज में एक व्यवस्था को स्थापित किए हुए हैं। वेद को आप्त वचन कहा जाता है अर्थात "वह वचन जो सत्य है"।
अनेक ग्रंथों में सत्य को अलग– अलग रूपों में दर्शाया गया है। ईश्वर के निराकार रूप में तथा साकार रूप में और सामाजिक व्यवहार में भी सत्य को प्रतिपादित किया गया है। मनुष्य ने समय के साथ परिभाषाओ के साथ भी छेड़छाड़ की परिभाषा को बदला है। परिभाषा को समझने के लिए उदहारण को प्रस्तुत किया जाता है और सत्य के उदाहरण स्वरुप है – ईश्वर, ब्रह्म, समय आदि। इन उदाहरण में सत्य स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।
यज्ञवल्य और मैत्रेयी के संवाद से भी है स्पष्ट होता है, याज्ञवल्य मैत्रयी के प्रश्नों के उत्तर देने से पहले स्तुती करते हैं–

"योनाहं नामृतास्याम् किमहं तेन् कुर्याम्"

अर्थात् हे चिरंतर! मेरे अंदर और बाह्य सर्वत्र ही विराजमान सत्य ! मुझे असत्य की सीमा से निकालकर अपने में मिला लो। यहाँ पर यह स्पष्ट है की सत्य का उपयोग ब्रह्म या ईश्वर के रूप में किया गया है। बृहदारण्यक उपनिषद में सत्य की विवेचना।

"यो वै सुधर्म सत्यम् वै तत्वास्मात्सत्यं वदंतुमाहुधर्मम् वदतिति
धर्म वा वदन्तं सत्यम् तदतोत्येत ध्दयेवैतदुभयं भवति"

(बृ. उ. अध्याय १, ब्रामण ४, श्लोक १४) अर्थातः वह जो धर्म है, निश्चय सत्य ही है, इसी से सत्य बोलने वाले को कहते हैं कि "यह धर्ममय वचन बोलता है" तथा धर्ममय वचन बोलने वाले से कहते हैं कि "यह सत्य बोलता है"। इस सूत्र से ये ज्ञात होता है कि धर्म और सत्य दोनों आपस में गहन रूप से जुड़े हुए हैं। इसलिए कहते हैं–

"सत्यमिति यथाशास्त्रार्थता"

अर्थात सत्य शास्त्रानुकूल अर्थ का नाम है। धार्मिक ग्रंथों में सत्य और धर्म को एक रूप माना है। पद्मपुराण मे सत्य की विवेचना–

"नास्ति सत्यात्परौ धर्मो नानृतात्पात्कम् परम"

(पद्मपुराण, सृष्टि खण्ड, श्लोक ६३) अर्थातः सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं और झूठ से बड़ा दूसरा कोई पाप नहीं। इसलिए जब कभी सत्य की चर्चा होती है तो उसे धर्म कहा जाता है। मुख्य विषय सत्य का यह है कि सत्य सत्य ही होता है। किसी व्यक्ति को संतुष्ट करने के लिए बोला गया झूठ कभी सत्य नहीं हो सकता। वर्तमान समय में सत्य की व्याख्या कुछ इसी तरह की है, जो शिष्टाचार के अंतर्गत बताई जाती है। मत्स्यपुराण और गरूढपुराण में शिष्टाचार आठ प्रकार के बताए गए हैं, जिसमें एक सत्य भी है। मत्स्य पुराण में सत्य की विवेचना–

"दृष्टानुभतमर्थम् च यः प्रष्टो न विगूहते
यथाभूत प्रवादस्तु इत्येतत् सत्य लक्षणम्"

(मत्स्यपुराण, अध्याय १४५, लोक ४२) अर्थात् देखें तथा अनुभव किए हुए विषय के पूछे जाने पर उसे न छिपाना अपितु गठित हुए के अनुसार यथार्थ कह देना, यह सत्य के लक्षण हैं। स्कंदपुराण के काशी खंड में सत्य को तीर्थ बताते हुए सत्य की विवेचना

"सत्य तीर्थं क्षमातीर्थं तीर्थमिन्द्रिय निग्रहः"
(स्कन्द पुराण, काशीखण्ड, पू. अध्याय ६, मंत्र ३०) अर्थात सत्य तीर्थ है, क्षमा तीर्थ है, और इंद्रियों को वश में करना भी तीर्थ है। स्कंदपुराण में ही आगे सत्य को व्याख्या करते हुए कहा गया है की–

**"सत्यमेकम् धर्मः सत्यमेकं परम तपः
सत्यं मेकम् परमं ज्ञानं सत्ये धर्म प्रतिष्ठिताः"**

(स्कंदपुराण, ब्राह्म खंड, चतुर्मासस्य महात्मा, अध्याय २, श्लोक १८) अर्थात एकमात्र सत्य ही परम धर्म है, एक सत्य ही परम तप है, केवल सत्य ही परम ज्ञान है और सत्य में ही धर्म की प्रतिष्ठा है।
भविष्य पुराण में नारायण की उपासना करते समय नारायण हरी को अर्थात साकार रूप में ईश्वर को सत्य से संबोधित किया गया है–

"सत्यरूपं सत्यसंधं सत्यं नारायणं हरिम्
यत्सत्यत्वेन जगतस्तं सत्यं त्वां नमाम्यहम्"

(भविष्य पुराण, प्रतिसर्ग पर्व, २/२६/४८) अर्थात् सत्यस्वरूप, सत्यसंध, सत्यनारायण भगवान हरी को नमस्कार है। जीस सत्य को जीविन की प्रतिष्ठा है। उस सत्यस्वरूप आपको नमस्कार है।
ऋग्वेद के अंतर्गत अग्निदेव से प्रार्थना की है, उसमें भी असत्य को त्यागने को कहा गया है–

"सा मा सत्योत्मिः परिपातु विधतो"
(ऋग्वेद १०/३७/२) अर्थात् हे अग्निदेव! असत्य का त्याग करके सत्य का आश्रय ग्रहण करने के लिए मुझे शक्ति दीजिए।
सभी उपनिषदों और पुराणों के अंतर्गत सत्य को जीवन का एक अभिन्न अंग, एक शक्ति के रूप में दर्शाया गया है, जो कि हमारे जीवन में प्राण की सम्कक्ष हमें प्रतीत होता है। महाभारत में सत्य की विवेचना–
सत्य को अत्यधिक परिभाषित करते हुए महाभारत के शांति पर्व में भी सत्य की व्याख्या गई हैं। उसमे कहा गया है की –

"स्वर्गम् सत्येन् गच्छति"
(महाभारत, शांतिपर्व, १६०/१) अर्थात सत्य ही ब्रह्मस्वरूप है, तप सत्य स्वरूप है, सत्य ही प्रजा को उत्पन्न करता है, सत्य से ही जगत स्थिर है, सत्य से ही मनुष्य स्वर्ग में जाता है।
इसके अंतर्गत मोह से मृत्यु तथा सत्य से अमरत्व की प्राप्ति बतलाई गई है। सत्य के संबंध में तांडय ब्राह्मण में कहा गया है।

"ऋतेनैव सर्वलोकम् गमयति"
(ताण्डय ब्राह्मण, १८/२/१६) सत्य के मार्ग से ही स्वर्ग तक पहुंचा जा सकता है। महाभारत के वन पर्व में कहा गया है–

"वेदस्योपनिषत् सत्यम्"
(महाभारत, वनपर्व, मार्कंडेय समस्या पर्व, अध्याय २०७, श्लोक ६७) अर्थात्: वेद का सार सत्य है।

"सत्यमेव गयीयस्तु शिष्टाचार निषेवितम्"
(महाभारत, वनपर्व, मार्कंडेय समस्या पर्व, अध्याय २०७, श्लोक ७५) अतः शिष्ट पुरुषों के आचार में ग्राहित सत्य ही सबसे अधिक गौरव की वस्तु हैं। महाभारत के आपध्दर्मपर्व के अंतर्गत युधिष्ठिरजी भीष्म से प्रश्न करते हैं– सत्य क्या है? उसका उत्तर देते हुए भीष्म कहते हैं–

**"सत्यं सत्सु सदा धर्म सत्यम् धर्म सनातनाः
सत्यमेव नमस्येत सत्यं ही परमागतिः"**

(महाभारत, शांति पर्व, आपध्दर्मपर्व, अध्याय १६२, श्लोक ४) अर्थात्: सत्यपुरषों में सदा सत्य रूप धर्म का ही पालन हुआ है, सत्य ही सनातन धर्म है, सत्य को ही सदा सिर झुकाना चाहिए क्योंकि सत्य ही जीवन की परम गति है।

"सत्यं धर्मस्तपो योगः सत्यं ब्रह्मसनातनम्
सत्यं यज्ञः परः प्रोक्ताः सर्व सत्ये प्रतिष्ठतम्"

(महाभारत, शांति पर्व, आपध्दर्मपर्व, अध्याय १६२, श्लोक ५)
अर्थात्: सत्य ही धर्म, तप और योग है, सत्य सनातन ब्रह्म है, सत्य को ही परम यज्ञ कहा गया है तथा सब कुछ सत्य पर ही टिका हुआ है।

"नास्ति सत्यात् परौ धर्मो नानृतात पातकम् परम
स्थिति ही सत्यम धमस्य तस्मात् सत्यं न लोपयेत"

(महाभारत, शांति पर्व, आपध्दर्मपर्व, अध्याय १६२, श्लोक २४)
अर्थात्: सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं और झूठ से बढ़कर कोई पातक नहीं है। सत्य ही धर्म की आधारशीला अतः सत्य का लोप ना करें। सत्य की व्याख्या शांति पर्व के मोक्ष पर्व के अंतर्गत भी की गई है।

"सत्यं ब्रह्म तपः सत्यं सत्यं विसृजति प्रजा
सत्येन धार्यते लोकः स्वर्गं सत्येन गच्छति"

(महाभारत, शांति पर्व, मोक्षपर्व, अध्याय १६०, श्लोक १) अर्थातः सत्य ही ब्रह्म है, सत्य ही तप है, सत्य प्रजा की सृष्टि करता है, सत्य के ही आधार पर संसार टीका हुआ है और सत्य के ही प्रभाव से मनुष्य स्वर्ग में जाता है।

**"सत्यमोकाक्षरं ब्रह्म सत्यमेकाक्षरं तपः
सत्यमेकाक्षरो यज्ञः** सत्यमेकाक्षरमं श्रुतम्"

(महाभारत, शांति पर्व, मोक्षपर्व, अध्याय १६६, श्लोक ६४) सत्य ही एकमात्र अविनाश ब्रह्म है, सत्य ही एकमात्र अक्षय तप है, सत्य ही एकमात्र अविनाशी यज्ञ है, सत्य ही एकमात्र नाश रहित सनातन वेद है।

"प्राणिनां जननं सत्यं सत्यं सन्तविरेव च
सत्येन वायुरभ्यैति सत्येन तपते रविः"

(महाभारत, शांति पर्व, मोक्षपर्व, अध्याय १६६, श्लोक ६७) अर्थात् सत्य प्राणियों को जन्म देने वाला (पिता) है, सत्य ही संतती है, सत्य से ही वायु चलती और सत्य से ही सूर्य तपता है।

"सम कक्षा तुला यतो यतः सत्यं ततोधितम्"
(महाभारत, शांति पर्व, मोक्षपर्व, अध्याय १६६, श्लोक ६६ १/२) जब सत्य और धर्म को तुला में सम्कक्ष रखा गया तो सत्य का पलड़ा भारी था।

"मुनयः सत्यनिरता मुनयः सत्यविक्रमाः
मुनयः सत्यशपथास्तस्मात् सत्यम् विशिष्यते"

(महाभारत, अनुशासन पर्व, दान धर्म पर्व, अध्याय ७५, श्लोक ३२) अर्थात् ऋषि– मुनि सत्यपाल, सत्यपरक्रमियों और सत्य प्रतीक होते हैं, इसलिए सत्य सबसे श्रेष्ठ है।

उपसंहार

इस प्रकार से सत्य को कई अर्थों में देखा गया है– सत्य को ब्रह्मस्वरूप देखा गया है, सत्य को साकार ईश्वर की उपासना के रूप में देखा जाता है और सत्य को ईश्वर के गुणों के आधार पर मनुष्य में सदाचार की दृष्टि से एक व्यवहार के रूप में दर्शया गया है |

जहाँ व्यक्ति ने इसकी परिभाषा को अपने अनुसार परिभाषित करते हुए सत्य की व्याख्या को अपने अनुसार ढालने का प्रयास किया। जब हम सभी ग्रंथों के अंतर्गत देखते हैं तो पाते हैं कि सत्य एक ऐसा विषय है, जिसमें कोई त्रुटी नहीं है, यह स्वयं में परिपूर्ण है | ऐसे विषय की व्याख्या कुछ समयावधि के अंतराल में परिवर्तित होती गई। उसी के परिणामस्वरूप आज हम सत्य को भी झूठ के साथ परिभाषित करते हैं।

व्यक्ति स्वार्थी है। वह अपने स्वार्थ को सिद्ध करने के लिए किसी भी विषय के साथ छेड़छाड़ कर सकता है। उसने सत्य की परिभाषा के साथ भी छेड़–छाड़ की।

सामान्य रूप में हमने उदाहरणार्थ देखा सत्य ब्रह्म है, सत्य ईश्वर है, सत्य समय है, सत्य आत्मा है। जब इन सभी उदाहरणों को देखते हैं तो हम पाते हैं कि सत्य एक विशाल विषय है। जो कहीं से भी खंडित नहीं है। और हम जीस सत्य को जानते हैं, वह टूटा–फूटा खंडित सत्य है। यह शोध पत्र। उसी खंडित विषय को समाप्त कर पूर्ण सत्य को सभी के सामने प्रकाशित करने के उद्देश्य से पूर्ण किया गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. उपनिषद् भाष्य, खण्ड चार, बृहदारण्य उपनिषद, शंकर भाष्य सहित, गीताप्रेस, गोरखपुर।
2. संक्षिप्त पद्मपुराण, संपादक तथा संशोधक जयदयाल गोयन्दका। सम्वत २०६२ १६वां पुनर्मुद्रण, गीताप्रेस, गोरखपुर।
3. मत्स्य महापुराण, सम्वत २०६५, चतुर्थं पुनर्मुद्रण, गीताप्रेस, गोरखपुर।
4. संक्षिप्त गरुड़ पुराण, सम्वत २०७१, २१पुनर्मुद्रण, गीता प्रेस गोरखपुर
5. संक्षिप्त स्कन्द पुराण, संवत २०५८, ८वाँ संस्करण, गीता प्रेस गोरखपुर
6. संक्षिप्त भविष्य पुराण, सं.२०६६, ११वां पुनर्मुद्रण, गीता प्रेस गोरखपुर
7. अग्निपुराण, सं.२०६५, ७वां पुनर्मुद्रण, गीता प्रेस गोरखपुर
8. संक्षिप्त नारद पुराण, सं.२०६५, ८वा पुनर्मुद्रण, गीताप्रेस गोरखपुर
9. कल्याण, नीतिसार अंक, वर्ष २०७६, गीताप्रेस गोरखपुर
10. महाभारत, द्वितीय खंड, वनपर्व और विराट पर्व, अनुवादक– पंडित रामनारायणदत्त शास्त्री, गीताप्रेस गोरखपुर
11. महाभारत, तृतीय खंड, उद्योग पर्व और भीष्म पर्व, पंडित रामनारायणदत्त शास्त्री पांडेय गीताप्रेस गोरखपुर
12. महाभारत पंचम खंड, शांति पर्व, अनुवादक– पंडित रामनारायणदत्त शास्त्री पाण्डेय, गीता प्रेस गोरखपुर
13. महाभारत, षष्ठ खंड, अनुशासन अश्वमेधिक, मौशल, महाप्रस्थानिक, और स्वर्गारोहणपर्व, पंडित रामनारायण दत्त शास्त्री पांडेय, गीताप्रेस गोरखपुर।
14. भगवान बुद्धा, आर. एस. रमन, संस्करण २०१५, निधि बुक सेन्टर दिल्ली (भारत)